

खुली अर्थनीति : प्रभाव और भविष्य

Khuli Arthniti: Prabhav Aur Bhavishya

किसी भी देश, उसकी सरकारी, कारोबार का आधार वहां की देश एवं जनहित में सुविचारित और निर्धारित अर्थनीति ही हुआ करता है। अर्थनीति का सुविचारित होना ही मात्र अच्छा नहीं हुआ करता, उसके अनुसार सही ढंग से चलने पर ही उसके सुपरिणाम सामने आया करते हैं। सुपरिणाम वही कहे और माने जाते हैं, जिनसे मात्र गिने-चुने लोगों का ही नहीं सर्व साधारण का, गरीबी की मान्य निचली रेखा से भी नीचे रह रहे व्यक्ति और परिवार का भी हित-साधन संभव हो सके। विचार करने पर हम स्पष्ट पाते हैं कि स्वतंत्र भारत में जो आर्थिक नीतियां अपनाई गई, आर्थिक विकास के लिए जो और जितने भी प्रकार की योजनाएं चलाई गई, उनका लाभ आम जन तक तो कतई नहीं पहुंच सका। सरकारी और व्यापारी-ठेकेदारी मिलीभगत के फलस्वरूप योजनाओं का धन इनकी जेबों में जाता रहकर, सुफल भी इन्हीं द्वारा उबारा जाता रह अमीर तो और अमीर तथा गरीब अपनी पहले की स्थिति भी गंवाकर गरीब एवं हीन होता गया। इस अर्थनीति ने तरह-तरह के भ्रष्टाचारों को जो जन्म दिया, उस सबकी एक अलग कहानी है।

ऐसा सब क्यों और कैसे हो गया? प्रश्न उठना स्वाभाविक है। उत्तर सीधा-सा है। एक तो यह कि अर्थनीतियां निर्धारण करने वाले व्यक्ति इस विषय के सही जानकार औरयोज्य न थे। दूसरे वे लोग दूरदर्शी भी नहीं थे कि दूरगामी परिणामों पर दृष्टि रखकर नीतियां बना सकते। तीसरी ओर बहुत ही महत्वपूर्ण बात यह है कि अर्थनीतियां ओर विकास-योजनाएं बनाते समय स्वदेश में उपलब्ध साधनों का कहीं कतई ध्यान नहीं रखा गया ा। सारी नीतियां विदेशों से प्राप्त होने वाले उधार के अनुदानों को सामने रखकर बनाई गई थी। उस उधार का बयाज चुकाने में ही आय का दीवाला निकल जाएगा, यह तक भी नहीं सोचा-विचारा गया था। इन प्रमुख कारणों के अतिरिक्त भी एक बहुत महत्वपूर्ण कारण यह था कि अर्थनीतियों से संबंधित कार्य एक जगह ही न होकर अनेक मंत्रालयों, उनके विभागों-उपविभागों से संबंधित कार्य एक जगह ही न होकर अनेक मंत्रालयों, उनके विभागों-उपविभागों में बिखरा पड़ा था। ऊपर से इंसपेक्टरी राज और उनकी लंबी-चौड़ी फौज, जो वास्तविक कार्य-नीति से तो परिचित था नहीं, हां, धौंसपट्टी और घूसखोरी में काफी एक्सपर्ट था।

एक तो करेला, उस पर नीम चढ़ा यहां तक कि एक-एक के लिए लोगों को परमिट-लाइसेंस बनावाने के लिए इधर-उधर, यहां से वहां भटकना पड़ता। वे जहां भी जाते, वहीं घूसखोरी की सुरसा को अपना मुंह बाएं पाते। फलस्वरूप अर्थ-विकास नीतियों का चरमरा जाना, उनमें कई तरह से दरारें पड़ जाना स्वाभाविक था।

इस प्रकार की विषम और लंबा करके रख देने वाली अर्थनीतियों की स्थितियों में सन 1991 के आस-पास केंद्र में नई सरकार का गठन हुआ। अर्थ या वित्त मंत्री की कुर्सी पर आसीन हुए श्री मनमोहन सिंह। कहा जाता है कि वे एक महान अर्थशास्त्री हैं। अधिकांश समय अमेरिका में ही रहे और अर्थनीतियों को लेकर वहां से बहुत प्रभावित हैं। लोग तो उन्हें अमेरिकनस्त तक कहने से नहीं चूकते। जो हो, उनके आगमन से देश की अर्थनीतियों को एक नया मोड़ मिलना आरंभ हुआ, जो आज तक भी जारी है। उन्होंने खुली यानी देशी-विदेशी सभी के लिए समान रूप से खुली अर्थ-नीतियां अपनाने का निश्चय और घोषणा की। विदेशों के लिए विशेष बांड तो जारी किए ही, उन्हें सस्ते में भूमि, बिजली, पानी तक देने की बात कही और भी सभी तरह के संभव प्रलोभन दिए। वे सुविधाएं प्रदान करने का आश्वासन दिया, जो बड़े-बड़े भारतीय निवेशकों तक की प्राप्त न हो पा रही थीं।

उपर्युक्त सभी लोभों, प्रलोभनों, आश्वासनों और व्यवस्थाओं के फलस्वरूप भारत में अर्थनीतियों का नया खुला युग आरंभ हुआ। पर सोचने की महत्वपूर्ण एक बात तो यह है कि विदेशी इन खुली अर्थ-नीतियों का लाभ उठाकर भारत में किस प्रकार के निवेश कर रहे हैं? दूसरे उनका भावी परिणाम हमारे सामने या भावी पीढ़ियों के सामने क्या आने वाला है? देखा जाए, तो अभी तक इन खुली अर्थनीतियों के अंतर्गत कुछ पेय एवं खाद्य पदार्थों के अंतर्गत ही विदेशी पूंजी का निवेश हो सका है। कई तरह के शीतल पेयों की 'कोला संस्कृति' वह भी लूट मचाने की सीमा तक कीमतों वाली, आलू चिप्स, मक्की के पैकड दाने और केटकी रेस्टोरेंट में विशेष प्रकार से भूने मुर्गे-बस इन्हीं में खुली अर्थनीति के अंतर्गत विदेशी निवेश हुआ है। सुनने-पढ़ने में आया है कि किसी विदेशी कंपनी के स्वदेशी नौकर बीकानेरी भुजिया तक का पेटेंट कटवा रहे या करवा चुके हैं। जो हो, अभी तक की खुली आर्थिक नीतियों के कारण विदेशी निवेशकों के दर्शन उपर्युक्त अनावश्यक क्षेत्रों में ही हुए हैं। सो इन वस्तुओं से भारतीय निवेशकों को अलाभ एवं आय उपभोक्ता के लिए महंगाई सबके सामने है।

अभी तक किसी ऐसे क्षेत्र में खुली अर्थ-नीतियों के अंतर्गत किसी प्रकार का कोई विशिष्ट विदेशी तकनीक भारत में नहीं आ सका। कल को वह सब भी आने लग सकता है। तब भारत के भविष्य की स्थिति पर कहीं घुटे एवं कहीं खुले स्वरों में अपने विचार भी प्रकट किया है। एक तो यह कि विदेशी-निवेशकों का पूंजी-निवेश जिस किसी भी क्षेत्र में होगा, इस क्षेत्र के छोटे-छोटे भारतीय निवेशक तो स्वतः ही समाप्त हो जाएंगे, बड़े-बड़े भारतीय भी विदेशियों के साथ दौड़ में पिछड़ जाएंगे। एक बहुत बड़ी आशंका यह प्रकट की गई है कि विदेशी-निवेश के कारण हमारी दशा हमारे देश को गुलाम बनाने वाली ईस्ट इंडिया कंपनी की तरह भी हो सकती है। जैसे इस कंपनी ने सीमित क्षेत्रों में व्यापार लेकर धीरे-धीरे सारे भ्रज्जारत में उसका विस्तार कर लिया था, वैसे वे कंपनियां भी करेंगी। बाद में ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपने जान-माल की रक्षा के लिए अपनी सेना खड़ी कर, धीरे से उसका विस्तार कर सारे भारत में अपना साम्राज्य स्थापित कर लिया था, कहीं ऐसा न हो कि वही पुराना इतिहास अपने को फिर से दोहराने लगे।

जो हो, आशंकाएं और भी कई तरह की प्रकट की जा रही हैं। हमारे मत से अब अठारहवीं-उन्नीसवीं शताब्दी की पुनरावृत्ति तो संभव नहीं पर खुली आर्थिक नीतियों का प्रयोग मात्र देशी-निवेशकों के लिए भी तो किया जा सकता था। यदि उन्हें देशी साधन अपनाकर अन्य सभी प्रदत्त सुविधाओं का उपयोग किया जाने दिया गया होता, तो निश्चय ही वह धन देश में ही रह सकता था जो रॉयल्टी या दूसरे नामों से विदेशों में जा रहा है। अभी भी अधिक समय नहीं गुजरा। खुली आर्थिक नीतियों का रुख भारतीय साधनों वाले अर्थतंत्र की ओर मोड़ा जा सकता है, ताकि भविष्य सुरक्षित रह सकें।